प्रगतिशील चेतना के कवि रमाशंकर यादव विद्रोही की कविताओं में जनचेतना

तेजस पुनिया

कविता और वास्तविक जीवन दोनों में समान रूप से विद्रोही और जनपक्षधर कवि रमाशंकर यादव 'विद्रोही' की आवाज हमेशा के लिए भले ही खामोश हो गई वह भी उस समय में जब देश में सरकार की शिक्षा नीतियों में समूल परिवर्तन चल रहा था। पूरा देश इन नीतियों के खिलाफ आंदोलन कर रहा था। और आंदोलन की इसी आग में डेढ़ माह तक कविवर 'विद्रोही' ने भी अपने अंतिम सांस तक योगदान दिया। विद्रोही मरते नहीं वे सदैव जीवित रहते हैं हमारे मन-मस्तिष्क में तथा हमारी जान चेतना में। विद्रोही उपनाम से कविता करने वाले रमाशंकर यादव, 'आधुनिक युग के कबीर' देश के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय को ही अपना घर मानते थे। वहीँ रहना, खाना, पीना, सोना सब उनका वहीँ था। शिक्षालय जो किसी देवालय के तुलनीय होता है वही ऐसी महान हुतात्माओं को जन्म दे सकता है। आधुनिक से उत्तर आधुनिक हो रही 21वीं के सच्चे तथा वास्तविक जनकवि थे विद्रोही जी। और आसमान में धान बोने की कूवत रखने वाली यह महान शख्सियत देश के छात्रों के हित में ही संघर्ष करते हुए इस दुनिया से रुखसत हुआ।

विद्रोही जी को मैं बहुत बार जेएनयू में आते-जाते देखा करता था। जब भी मैं वहाँ जाता तो अक्सर रात के समय में एक व्यक्ति के आस पास अमुमन कुछ बच्चों की टोली देखता था। शायद यह मेरी अनभिज्ञता थी या मूर्खता कि मैं ना कभी उन्हें मिल पाया ना जान पाया की ये शख्स कौन है। मानसिक रूप से विक्षिप्त सा दिखने वाला कोई व्यक्ति इस कदर साधारण जीवन जीने वाला महान जनकवि भी हो सकता है। जो आज के तथाकथित डिग्रीधारियों से कई हजारों गुणा दूर निकल जाये। पाठकीय शिक्षा से दूर विद्रोही जी असली शिक्षा जो देश के मजदूरों के हित में सोचे काम करे ऐसी शिक्षा के हिमायती थे। जो मानवीय मूल्यांकन कर सके विद्रोही जी कोई कोई भी सामाजिक बंधन बाँध नहीं पाया। उनकी कविताएँ कभी उनके स्वयं के द्वारा लिपिबद्ध नहीं की गई। बस जो कुछ रचनाएँ हैं वे उन्हीं बच्चों द्वारा विभिन्न पत्रिकाओं में उनके नाम से छपवाई गई मिलती है। उनकी एक कविता –

मैं भी मरूँगा
और भारत के भाग्य विधाता भी मरेंगे
लेकिन मैं चाहता हूँ
कि पहले जन-गण-मन अधिनायक मरें।
फिर भारत भाग्य विधाता मरें
××××××××××
और मित्र सब करें दिल्लगी
कि ये विद्रोही भी क्या तगड़ा कवि था
कि सारे बड़े-बड़े लोगों को मारकर तब मरा।

दिलीप मंडल लिखते हैं "प्रोफेसरों रमाशंकर यादव नाम का वह मासूम सा लड़का सुल्तानपुर,यूपी से पढ़ाई करने के लिए जेएनयू, दिल्ली आया था। तुमने रमाशंकर यादव को पढ़ाई पूरी नहीं करने दी। वह अपनी डिग्री कभी नहीं ले पाया। क्या विद्रोही प्रतिभा से डरते थे तुम?... विद्रोही बिना डिग्री के तुमसे कोसों आगे निकल गया। छूकर दिखाओ, लिखो वैसी एक रचना, है दम ? मृत्युंजय प्रभाकर का कहना है-"जाने कैसे कैसे धन्ना सेठ बन चुके और बनने की उम्मीद में खुले प्रकाशकों के यहाँ से छपते रहे पर रमाशंकर यादव और अदम गोंडवी जैसे जनकवि के लिए प्रकाशक पैदा नहीं हुए। न ही प्रकाशन, पुरस्कार और रोजगार माफिया चलाने वाले वामपंथी आलोचकों को उनका ख्याल आया।

कुमार सुंदरम के अनुसार जेएनयू में हर साल एक चौथाई विद्यार्थी बदल जाते हैं नए लोग आते हैं इन नए लोगों का सामना गंगा ढाबे पर बैठे विद्रोही जी से होता था। तो उनका जेएनयू की परम्परा से परिचय

होता था कैम्पस के जो दशकों पुराने आंदोलनों और पड़ावों के किस्से हम सुनते थे। उनकी निरन्तरता विद्रोही जी के रूप में हमें साक्षात दिखती थी, हम सबको विद्रोही जी ने ऐसे ही सींचा था इसलिए शायद उनका आखिरी दिन भी आंदोलनरत छात्रों के बीच ही बीता। सच में गज़ब जीवट वाले इंसान थे वह।

रमाशंकर यादव 'विद्रोही' पूछने पर कहते हैं कि "मैं तो नाम से ही विद्रोही हूँ। 'रमा' को तो विष्णु के साथ जाना था लेकिन देखो यहाँ शंकर के साथ हैं" उनकी कविताएँ लफ़्फ़ाज़ी नहीं हैं। बल्कि जमीनी हकीकत को साहस के साथ बेपर्दा करती है।

"आपकी गलती भी क्या है, मेरा भी तो काम है,
सच को कहने के लिए शायर सदा बदनाम है।"

महिलाओं पर वे लिखते हैं-

इतिहास में पहली स्त्री हत्या
उसके बेटे ने अपने बाप के कहने पर की
जमदाग्नि ने कहा कि ओ परशुराम।
मैं तुमसे कहता हूँ कि अपनी माँ का वध कर दो
और परशुराम ने कर दिया
इस तरह से पुत्र पिता का हुआ और पितृसत्ता आई-

इन पंक्तियों को समझने के लिए केवल सहृदय होना ही काफी है। जरूरी नहीं की आप भाषा के बड़े विद्वान या जानकार हों। ना ही यह रचना किसी ऐसे साहित्यकार की है जिसने बड़े-बड़े पुरूस्कार प्राप्त किये हो। बातों-बातों में कविताएँ गढ़ लेने वाले, जहाँ दिल किया सो जाने वाले, जिसने जो दिया उसमें अपनी जरूरतों को पूरा कर लेना... यही उनके जीने का अंदाज था। शायद बड़ी और महान हुतात्माओं की यही पहचान भी होती है। विद्रोह करने का ख्याल बहुतों के मन में आता है किन्तु करने की हिम्मत सबमें नहीं होती। महान, फक्खड़ या साधु जीवन जीने से यह अर्थ कतई नहीं होता कि आप पहाड़ों पर, हिमालय पर विचरण करें। वह जीवन तो कहीं भी जिया जा सकता है। उसके लिए बस स्वयं को सभी बन्धनों, सामाजिक बन्धनों से दूर रखना होता है। फिर क्या पारिवारिक बन्धन और क्या दुनियादारी उनके लिए कविता के मायने क्या है वे खुद बताते हैं।

कविता क्या है... खेती है
कवि के बेटा-बेटी है
बाप का सूद है, माँ की रोटी है।

भला कविता की कोई ऐसी परिभाषा क्या सबने पढ़ी सुनी होगी। उनकी कविताओं की खासियत जमीनी हकीकत को बड़े साहस के साथ बेपर्दा कर देने की थी। अपने नास्तिकता के तेवर से जमाने वालों पर तंज कसना तथा कुछ लोगों द्वारा पागल कहे जाने पर उसी विद्रोही अंदाज में कहना-

मैं किसान हूँ
आसमान में धान बो रहा हूँ
कुछ लोग कह रहे हैं कि पगले!
आसमान में धान नहीं जमा करता
मैं कहता हूँ पगले!
अगर जमीन पर भगवान जम सकता है।
तो आसमान में धान भी जम सकता है।
और अब तो दोनों में से कोई एक होकर रहेगा।
या तो जमीन से भगवान उखड़ेगा
या आसमान में धान जमेगा।

कवि रमाशंकर यादव 'विद्रोही' अकादमिक गलियारों, पुरुस्कारों, प्रतियोगिताओं की होड़ से परे सादा जीवन

उच्च विचार का पालन करने वाले थे। मोहनजोदड़ो की सीढ़ियों पर जली हुई महिला के प्राप्त अवशेषों पर विद्रोही जी कहते हैं।

मैं सोचता हूँ और बार-बार सोचता हूँ
कि आखिर क्या बात है कि
प्राचीन सभ्यताओं के मुहाने पर
एक औरत की जली हुई लाश मिलती है

नई दुनिया की कल्पना करते हुए वे कहते है एक दुनिया नई हमको गढ़ लेने दो... जहाँ आदमी-आदमी की तरह रह सके.... कह सके, सुन सके, सह सके...भले कुवंर नारायण, नरेश सक्सेना या केदारनाथ सिंह की कविता पंक्तियाँ याद हो न हो लेकिन विद्रोही की पंक्तियाँ अवचेतन में जाने क्यों जगह बना लेती है, और बार-बार उद्धत होने को बैचेन करती हैं जैसे ये विद्रोही की कविता न होकर मिर्जा ग़ालिब के अशआर हों या कोई चिर परिचित मुहावरे

मैं एक दिन पुलिस और पुरोहित दोनों को
एक ही साथ औरतों की अदालत में तलब कर दूंगा।
या मेरी नानी की देह, देह नहीं आर्मीनिया की गाँठ थी
या
ओ री बुढ़िया, तू क्या है
आदमी कि आदमी का पड़े।

बेशक विद्रोही की कवितायेँ जिस तरह के वितान रचती है। उसे ड्राइंग रूम में नहीं गढ़ा जा सकता। ये कविताएँ बेशक कवि की जिद को सार्वजनिक करती है। यहाँ कवि कर्म और कविता की समाजिक जिम्मेदारी कवि की बेचैनी को प्रदर्शित करती है।

तो क्या
आप मेरी कविता को सोंटा समझते हैं?
मेरी कविता वस्तुतः लाठी ही है
इसे लो और भांजो!
××××
तुम इसे भगवान के खिलाफ भांजोगे
भंज जायेगी।
लेकिन तुम इसे इंसान के खिलाफ भांजोगे
न,नहीं भंजेगी।
कविता और लाठी में यही अंतर है।

जब विद्रोही यह कहते है तो लगता है कि ये किसी पागल या मानसिक रूप से विक्षिप्त व्यक्ति का कथन हो ही नहीं सकता लेकिन सभ्य समाज ऐसे व्यक्ति को पागल ही कहता है। जो ये कहे- "मैं ऐसी कविताएँ लिखता हूँ जिसके कारण या तो मुझे पुरूस्कार मिले या फिर सत्ता से सजा... लेकिन देखो ये कैसी व्यवस्था है जो मुझे न पुरूस्कार देती है न सजा...अब मैं क्या करूँ... जबकि मैंने लिखा ये सोचकर कि मुझे सजा मिलेगी। अकसर वे दिल्ली के जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (जेएनयू) के ढाबों पर कविता सुनाते नजर आ जाते थे। अगर वे जेएनयू में नजर न आते तो समझ लीजिए कि छात्रों के साथ किसी विरोध मार्च में शिरकत कर रहे होंगे, जहां अपनी ओज भरी कविताओं से वे उत्साह बढ़ाते थे। बागी कवि रमाशंकर यादव 'विद्रोही' की दिनचर्या यही थी। करीब तीन दशकों से विद्रोही अघोषित तौर पर जेएनयू के स्थायी नागरिक बने हुए थे। उनकी झुर्रियां जनपक्षधरता, संघर्ष और जिजीविषा का लंबा इतिहास समेटे हुए थी।

विद्रोही जी कहते थे, 'जेएनयू में आंदोलनों की समृद्ध परंपरा है और मैं एक्टिविस्ट कवि हूं। ऐसे में और क्या चाहिए?' अपनी पत्नी शांति देवी और बच्चों से अलग जेएनयू को ही अपना घर बना लेने वाले विद्रोही बताते हैं, 'मैं अपना तेवर बरकरार रख पाया क्योंकि शांति ने पारिवारिक जिम्मेदारियों से मुझे मुक्त रखा।'

वे आंदोलनों के बीच रह कर कविता रचते थे, इसलिए उनकी कविताएं सीधे जनता से जुड़ी हैं। विद्रोह ही उनका आधार था। असल में उनका स्वभाव कबीर

और नागार्जुन जैसा फक्कड़ था, सो कविताएं सीधा वार करती हैं। किसान, मजदूर, स्त्रियां सब उनके केंद्र में हैं। उनकी एक कविता में इस बात का सबूत भी मिलता है जब वे कहते हैं कि

इतिहास में वह पहली औरत कौन थी
जिसे सबसे पहले जलाया गया?
मैं नहीं जानता
लेकिन जो भी रही हो मेरी माँ रही होगी
मेरी चिंता यह है कि भविष्य में
वह आखिरी स्त्री कौन होगी
जिसे सबसे अंत में
जलाया जाएगा?
मैं नहीं जानता
लेकिन जो भी होगी मेरी बेटी होगी
और यह मैं नहीं होने दूँगा।
अथवा
हर जगह ऐसी ही जिल्लत
हर जगह ऐसी ही जहालत
हर जगह पर है पुलिस
और हर जगह है अदालत।
हर जगह पर है पुरोहित
हर जगह नरमेध है
हर जगह कमजोर मारा जा रहा है, खेद है

उनकी कविताओं का फलक बहुत व्यापक है- मोहनजोदड़ो, मेसोपोटामिया और स्पार्टा से होता हुआ क्लिंटन और बुश तक फैला हुआ था। विद्रोही का सिर्फ एक कविता संग्रह 'नयी खेती' ही प्रकाशित हुआ है क्योंकि वे मौखिक रूप से ही कविता सुनाते रहे और फक्कड़ जिंदगी जीते रहे। अपनी एक कविता 'मोहनजोदड़ो की आखिरी सीढ़ी से...' में विद्रोही कहते हैं- मुझको बचाना अपने पुरखों को बचाना है मुझको बचाना अपने बच्चों को बचाना है तुम मुझे बचाओ मैं तुम्हारा कवि हूँ।

लेकिन शायद जनता के असल कवि को हम बचा नहीं पाए। विद्रोही जी सही मायनों में आधुनिक युग के कबीर हैं। तभी तो वे कहते हैं-

तुम्हारे मान लेने से
पत्थर भगवान हो जाता है
लेकिन तुम्हारे
मान लेने से
पत्थर पैसा नहीं हो जाता।

दमन के इतिहास और इतिहास के दमन की सही पहचान कराने वाले कवि रमाशंकर विद्रोही की कवितायेँ गुलामों के दमन और दुःख का उदात्तीकरण नहीं करती है। सभ्यता समीक्षा का कार्यभार बिना द्वन्दात्मक पद्धति के मुकम्मल नहीं हो सकता। इसके लिए इतिहासबोध का होना अनिवार्य है और यह इतिहास बोध उनकी कविताओं में हर जगह मौजूद है। विद्रोही की कविताएँ वर्तमान में पसरे स्त्रियों और गुलामों के दमन की ही शिनाख्त नहीं करती हैं बल्कि अतीत में हुए अन्याय और अन्याय की पीठ पर खड़ी हुई सभ्यताओं की जाँच करती है। इनकी कविता में जो आग है। जो बैचेनी है वह अपने पुरखों को भी मुक्ति दिलाने के उत्तरदायित्व बोध के कारण है।

संदर्भ-सूची:

1. स्त्रीकाल डॉट कॉम
2. स्पर्श ब्लॉग
3. संस्मरण: रमाशंकर यादव विद्रोही- अनवर हुसैन
4. स्वाधीन वेबसाइट; राष्ट्रीय आंदोलन फ्रंट द्वारा संचालित
5. आईचौक डॉट इन विनीत कुमार
6. बीबीसी न्यूज़ 9 दिसम्बर 2015

संपर्क : तेजस पूनिया, भूतपूर्व छात्र दिल्ली विश्विद्यालय किरोड़ीमल कॉलेज, +918802707162